# 8

# मोहमुद्गर तथा रामगुणकीर्तन

सभी दर्शनों में अत्यन्त प्रसिद्ध और उत्कृष्ट अद्वैत दर्शन है। सामान्तया किसी वस्तु का प्रत्यक्ष करना दर्शन कहलाता है दर्शनशास्त्र में मूलतत्त्व का इससे साक्षात्कार किया जाता है या अनुभव किया जाता है। दृश् धतु से करण अर्थ में ल्युट् प्रत्यय से दर्शन शब्द निष्पन्न होता है। अद्वैत दर्शन का मूल तत्त्व है-''सर्व खल्विंद ब्रह्म'' अर्थात् जो कुछ भी है वह सब ब्रह्म ही है। यह जगत ही ब्रह्म का विवर्तभूत है। जैसे रस्सी का सर्प भ्रम में सर्प रज्जु का विवर्तभूत है। वस्तुत: वहाँ रस्सी ही है किन्तु सर्प देखा जाता है। इस प्रकार वस्तुत: ''सर्व ब्रह्मैव'' सब ब्रह्म ही है। जीव तो अज्ञानोपहित ब्रह्म है। जीव और ब्रह्म का ऐक्य की परोक्षानुभूति है। इस प्रकार यह अद्वैत दर्शन का मूल है। अद्वैत दर्शन के आचार्यो में विद्वानों द्वारा परमपूज्य श्री शंकराचार्य पूजे जाते हैं। वे भाष्य ग्रन्थों के प्रणेता, अद्वैत सिद्धान्तों के प्रतिष्ठापक थे उनके द्वारा विरचित ब्रह्मसूत्रभाष्य और गीताभाष्य अद्वैत वेदान्त के स्तम्भ रूप है। वे न केवल भाष्य रचना से अपितु स्तोत्र के माध्यम से भी अद्वैत वेदान्त के उपदेशक थे। उनके द्वारा विरचित स्तोत्रों में द्वादशपंजरिका स्तोत्र अद्वितीय है। उसी का नाम मोहमुद्गर है। यहाँ आचार्य की श्लोक संरचना में अतीव सुललित और सरल शैली दिखाई देती है। इस प्रकार की सरल और सुललित शैली से ही उन्होंने अद्वैत सिद्धान्त को इस स्तोत्र में प्रतिपादित किया है। इस स्तोत्र के श्लोकों का सरल वाक्यों से इस पाठ में अन्वयार्थ ज्ञान होगा।

जिस व्यक्ति को कृत्याकृत्य विवेक है वही संसार में प्रतिष्ठा को प्राप्त होता है। कृत्याकृत्य विवेक, सदाचार परायण और सत्य निष्ठ जनों में पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्र मूर्धन्यता से भजे जाते हैं। यद्यपि उनका जीवन विपत्तियों से मुक्त नहीं था परन्तु उन्होंने कदापि सत्यवादिता को नहीं छोड़ा। कैसे जीवन में स्थिरता हो इस विषय में उनका आचरण ही प्रमाण है। इसलिए उनके अमर चरित्र का आश्रय लेकर महाकवि वाल्मीकि ने रामायण महाकाव्य की रचना की। अत: वाल्मीकि आदिकवि और रामायण आदिकाव्य के रूप में प्रसिद्ध हैं। रामायण में सात काण्ड

हैं। बालकाण्ड, अयोध्याकाण्ड, अरण्यकाण्ड, किष्किन्धकाण्ड सुन्दरकाण्ड, युद्धकाण्ड और उत्तरकाण्ड। इन काण्डों में अरण्य काण्ड में वाल्मीकि के द्वारा श्रीरामचन्द्रजी का गुणवर्णन सम्वृत है उनमें से कुछ श्लोकों को इस पाठ में स्वीकृत किया गया है। उन श्लोकों में वर्णित श्रीरामचन्द्र गुणवर्णन को इस पाठ में देखते हैं।

## उद्देश्य

इस पाठ को पढ़कर आप सक्षम होंगे:

- स्तोत्र साहित्य को जान पाने में;
- मोहमुद्गर स्तोत्र के माध्यम से अद्वैत वेदान्त के सिद्धान्त को समझ पाने में;
- ''श्रीरामगुणवर्णन'' अंश के अध्ययन से रामचन्द्र के गुणों को जान पाने में;
- श्लोकों के अन्वयार्थ और समास को जान पाने में;
- विविध नये (नूतन) शब्दों को जान पाने में और;
- विविध शब्दों के प्रयोग स्थल को जानकर स्वयं भाषा व्यवहार में उन शब्दों का उचित प्रयोग कर पाने में।

## 8.1 सम्पूर्ण मूलपाठ

**भज गोविन्दं भज गोविन्दं गोविन्दं भज मूढमते।**
**सम्प्राप्ते सन्निहिते मरणे नहि नहि रक्षति डुकृञ् करणे ॥1॥**

**मूढ जहीहि धनागमतृष्णां कुरु सद्बुद्धिं मनसि वितृष्णाम्।**
**यल्लभसे निजकर्मोत्पात्तं वित्तं तेन विनोदय चित्तम्॥2॥**

**अर्थमनर्थं भावय नित्यं नास्ति ततः सुखलेशः सत्यम्।**
**पुत्रादपि धनभाजां भीतिः सर्वत्रैषा विहिता नीतिः॥3॥**

**का ते कान्ता कस्ते पुत्रः संसारोऽयमतीव विचित्रः।**
**कस्य त्वं कः कुतः आयातस्तत्त्वं चिन्तय यदिदं भ्रातः॥4॥**

**मा कुरु धनजनयौवनर्वं हरति निमेषात्कालः सर्वम्।**
**मायामयमिदमखिलं हित्वा ब्रह्मपदं त्वं प्रविश विदित्वा॥ 5 ॥**

**कामं क्रोधं लोभं मोहं त्यक्तवात्मानं भावय कोऽहम्।**
**आत्मज्ञानविहीना मूढास्ते पच्यन्ते नरकनिगूढाः॥ 6 ॥**

सुरमन्दिरतरुमूलनिवासः शय्या भूतलमजिनं वासः।
सर्वपरिग्रहभोगत्यागः कस्य सुखं न करोति विरागः॥ 7 ॥

शत्रौ मित्रे पुत्रे बन्धौ मा कुरु यत्नं विग्रहसन्धौ।
भव समचित्तः सर्वत्र त्वं वाञ्छस्यचिराद्यदि विष्णुत्वम्॥ 8॥

त्वयि मयि चान्यत्रैको विष्णुर्व्यर्थं कुप्यसि मय्यसहिष्णुः।
सर्वस्मिन्नपि पश्यात्मानं सर्वत्रोत्सृज भेदज्ञानम्॥ 9 ॥

प्राणायामं प्रत्याहारं नित्यानित्यविवेकविचारम्।
जाप्यसमेतसमाधिविधनं कुर्ववधनं महदवधनम्॥ 10 ॥

नलिनीदलगतसलिलं तरलं तद्वज्जीवितमतिशयचपलम्।
विद्धि व्याध्यभिमानग्रस्तं लोकं शोकहतं च समस्तम्॥ 11 ॥

का तेऽष्टादशदेशे चिन्ता वातुल तव किं नास्ति नियन्ता।
यस्तवां हस्ते सुदृढनिबद्धं बोधयति प्रभवादिविरुद्धम्॥ 12 ॥

गुरुचरणाम्बुजनिर्भरभक्तः संसारादचिराद् भव मुक्तः।
सेन्द्रियमानसनियमादेवं द्रक्ष्यसि निजहृदयस्थं देवम्॥ 13 ॥

द्वादशपञ्जरिकामय एष शिष्याणां कथितो ह्युपदेशः।
येषां चित्ते नैव विवेकस्ते पच्यन्ते नरकमनेकम्॥ 14 ॥

## 8.2 मूलपाठ की व्याख्या

भज गोविन्दं भज गोविन्दं गोविन्दं भज मूढमते।
सम्प्राप्ते सन्निहिते मरणे नहि नहि रक्षति डुकृञ् करणे ॥ 1॥

मूढ जहीहि धनागमतृष्णां कुरु सद्बुद्धिं मनसि वितृष्णाम्।
यल्लभसे निजकर्मोत्पात्तं वित्तं तेन विनोदय चित्तम्॥ 2॥

अर्थमनर्थं भावय नित्यं नास्ति ततः सुखलेशः सत्यम्।
पुत्रादपि धनभाजां भीतिः सर्वत्रैषा विहिता नीतिः॥ 3 ॥

का ते कान्ता कस्ते पुत्रः संसारोऽयमतीव विचित्रः।
कस्य त्वं कः कुतः आयातस्तत्त्वं चिन्तय यदिदं भ्रातः॥4॥

**अन्वय**– सन्निहिते मरणे सम्प्राप्ते अपि नहि नहि डुकृञ् करणे रक्षति (तस्मात् हे) मूढमते गोविन्दं भज, गोविन्दं भज, गोविन्दं भज ।1।

मूढ, धनागमतृष्णां जहीहि। समद्भुद्धिं मनसि वितृष्णां कुरु। यत् निजकर्मोत्पात्तं वित्तं लभसे तेन चित्तं विनोदय ।। 2।।

अर्थं अनर्थं नित्यं भावय। ततः सुखलेशः नास्ति सत्यम्। पुत्राद् अपि धनभाजां भीतिः। सर्वत्र एषा नीतिः॥3॥

ते का कान्ता एते कः पुत्रः। अयं संसारः अतीव विचित्रः। त्वं कस्य कः। कुतः आयातःयद् इदं तत्त्वं भ्रातः चिन्तय ॥ 4 ॥

**अन्वयार्थ**– मृत्यु समीप आने पर डुकृञ् करणे आदि व्याकरण रक्षा नहीं करता इसलिए हे मूढमति गोविन्द को भजो। हे मूढ धनागम तृष्णा को छोड़ो सद्‌बुद्धि सच्चिन्तन से वैराग्य करो क्योंकि अपने कर्म से उपर्जित धन से मन का विनोद करो। धन अनर्थ का कारण है इसका सदैव चिन्तन करो, इस कारण सुख का आभास नहीं होता यह सत्य है कि पुत्रादि से भी धन हरण का भय हो जाता है। यह नीति सर्वत्र देखी जाती है। यह तेरी पत्नी, तेरा पुत्र, यह दृश्यमान क्षणस्थायीजगत अतीव विचित्र है। तू कौन है, कहॉ से आया, जो यह यथार्थ भूत है उस का चिन्तन करो।

**व्याख्या**– इस स्तोत्र में प्रथम श्लोक ध्रुवपद है। अर्थात प्रत्येक श्लोक के बाद इस श्लोक की आवृत्ति होती है। यहाँ भगवत पाद् शंकर कहते हैं कि जब मरण समीप आता है तब न्याय व्याकरणादि सासांरिक तत्वपूर्ण शास्त्रों के ज्ञान से मुक्ति नहीं होती। क्योंकि इनके ज्ञान से केवल कुतर्क के लिए मति होती है। इससे परम प्रिय मोक्ष नहीं होता। इस प्रकार के शास्त्रों में अनित्य पदार्थों के विषय में ही चर्चा निहित है। इसलिए हे अज्ञानी मनुष्य यदि तू सासांरिक दुखों से मुक्ति प्राप्त करना चाहता है तो गोविन्द परमेश्वर का भजन एवं कीर्तन कर।

धन और काम के उपभोग की समाप्ति नहीं होती परन्तु उतरोत्तर बढ़ती ही है। अत एव महाभारत में प्रसिद्धोक्ति है –**न जातुः कामः कामानापुपभोगेन शाम्यति।**

**हविषा कृष्णवर्त्मेव भूय एवाभिवर्धते॥**

इसलिए धनागम की तृष्णा त्यागो। क्योंकि धन की तृष्णा विषयों से मन को परमात्मा में स्थापित करने का अवकाश नहीं देती। सत् चिन्तन से मन की मलिनता क्षीण होती है। इस कारण सद्‌बुद्धि करनी चाहिए। मन में विषयों का वैराग्य सम्पादित करना चाहिए, क्योंकि विषय वैराग्य के बिना मुक्ति नहीं होती। वस्तुत यहां शम या शान्ति का प्रतिपादन किया गया है। शम नाम ज्ञान के साधन जो श्रवण, मनन, निदिध्यासन है उन से भिन्न विषय से अन्तरिन्दिय मन का निग्रह है।

और भी स्वयं सत्कर्म से जो प्राप्त होता है उसी धन से यावत् चित्त विनोद नाम स्वकीय अभिलाषपूर्ण करनी चाहिए। दूसरों के धन को देखकर इर्ष्या नहीं करनी चाहिए। अथवा दूसरों के धन को ऋण रूप से स्वीकार करके भोगादि नहीं करने चाहिए। अतः गोविन्द को भजो। (2)

धन सदा अनिष्ठ का ही सम्पादन करता है अत एव सुभाषित कही गयी है।

**अर्थस्यार्जने दुःखमर्जितानां च रक्षणे।**
**आये दुःखं व्यये दुःख कथमर्थः सुखावहः।**

अर्थात् सुख नहीं होता। क्योंकि धन का प्राचुर्य जब होता है। तब मन में शान्ति नहीं होती। लोक में देखा जाता है कि जो अधिक धनवान है उसका स्वयं के पुत्र एवं भार्या में भी विश्वास नहीं होता। वह डरता है कि उसका पुत्र व भार्या सब कुछ हरेगा। इसलिए अर्थ अर्थात् धन से सुख नहीं है। अत: गोविन्द को भजो-3

जगत में विद्यमान सम्बन्ध क्षणिक होता है, यह मेरी पत्नी, यह मेरी पुत्र है इत्यादि सभी प्रकार के संबंध ज्ञान मिथ्याभूत है। यह दृश्यमान संसार अतीव विचित्र होता है। क्योंकि इसमें यह मेरी पत्नी यह मेरा पुत्र इत्यादि ज्ञान यद्यपि मिथ्याभूत है फिर भी यह संसार के सत्यत्व से यह सब कुछ हमारे सामने स्थापित करता है। अत: मैं कौन हूँ ? मैं किस जगत से हूँ यह सब कुछ, यदि जानना चाहते हैं तो गोविन्द को भजो (4)

## पाठगत प्रश्न 8.1

1. मरण समीप हो तो कौन रक्षा नहीं करता?
2. मूढ़ से क्या त्यागना चाहिए?
3. कब अर्थ (धन) अनर्थ होता है?
4. किससे चित्त का विनोद करना चाहिए?
5. सर्वत्र कौन नीति विहित है?
6. संसार कैसे विचित्र है?

## 8.3 मूलपाठ की व्याख्या

**मा कुरु धनजनयौवनगर्वं हरति निमेषात्कालः सर्वम्।**
**मायामयमिदमखिलं हित्वा ब्रह्मपदं त्वं प्रविश विदित्वा।। 5 ।।**

**कामं क्रोधं लोभं मोहं त्यक्तवात्मानं भावय कोऽहम्।**
**आत्मज्ञानविहीना मूढास्ते पच्यन्ते नरकनिढा:।। 6 ।।**

**सुरमन्दिरतरुमूलनिवास: शय्या भूतलमजिनं वास:।**
**सर्वपरिग्रहभोगत्याग: कस्य सुखं न करोति विराग:।। 7 ।।**

**शत्रौ मित्रे पुत्रे बन्धै मा कुरु यत्नं विग्रहसन्धै।**
**भव समचित्त: सर्वत्र त्वं वांछस्यचिराद्यदि विष्णुत्वम्।। 8।।**

**अन्वय-** धनजनयौवनगर्वं मा कुरु। काल: निमेषात् सर्वं हरति। त्वं इदं अखिलं मायामयं हित्वा विदित्वा प्रविश। तत्साधनाय त्वं गोविन्दं भज।। 5 ।।

कामं क्रोधं लोभम् मोहं त्यक्त्वा अहं कः आत्मानं भावय। ये आत्मज्ञानविहीनाः ते मूढाः नरकनिगूढाः पच्यन्ते। अतः दुःखात् मुक्तये गोविन्दं भज।। 6 ।।

सुरमन्दिरतरुमूलनिवासः भूतलं शय्या अजिनं वासः। सर्वपरिग्रहभोगत्यागः। विरागः कस्य सुख न करोति ।। 7 ।।

यदि अचिराद् विष्णुत्वं वांछसि शत्रौ मित्रे पुत्रे बन्धै च विग्रहसन्धै यत्नं मा कुरु। सर्वत्र समचित्तः भव ।। 8 ।।

**अन्वयार्थ**- धन में और अपनी यौवनावस्था में गर्व अहंकार मत करो क्योंकि महाकाल क्षणभर में हठात् सब कुछ हर लेता है। इस मायामय जगत् को छोड़कर आत्मज्ञान प्राप्त करो। इसलिए गोविन्द को भजो।काम क्रोध द्वेष लोभ को छोड़कर मैं कौन हूँ ऐसा अपना चिन्तन करो आत्मज्ञान विहीन नरक लोक के समान दुःख को प्राप्त करते हैं।

देवालय या वृक्ष के नीचे पृथ्वी पर निवास करना, मृगछाल धारण करना, सभी भोगों का परित्याग करना ये ही वैराग्य हैं जिसमें सुख की प्राप्ति होती है। यदि शीघ्र ही ब्रह्मस्वरूप को प्राप्त करना चाहते हो तो शत्रु में, मित्र में, पुत्र में, बन्धु में, संधि विग्रह का प्रयत्न नहीं करना चाहिए। सभी में समभाव होकर रहो।

**व्याख्या**- धन के अनुचर और स्वयं की युवावस्था पद्म के पत्ते पर स्थित जल के समान क्षणस्थायी है। इस कारण उन विषयों में कभी भी गर्व आत्मत्वबुद्धि और दम्भ नहीं करना चाहिए। क्योंकि ये सब काल के अधीन होते हैं। काल अपनी इच्छा से एक ही क्षण में सृजन करता है और दूसरे ही क्षण में नष्ट कर देता है। इसलिए हे मित्र मिथ्यामाया से आवृत इस अखिल संसार को त्याग कर ब्रह्मानन्द की प्राप्ति के लिए आत्मज्ञान को प्राप्त कर। उसकी प्राप्ति के लिए तू गोविन्द को भज।। (5)

सम्पूर्ण यह संसार काम-क्रोध आदि से परिपूर्ण है। स्त्रीधन आदि के उपभोग की इच्छा काम है, विद्वेष अभिलाषा, लोभ मोह ये सब अनित्य है। इस कारण इन सब का त्याग करना सर्वदा विचारणीय है कि मेरा नाम क्या है, मेरा स्वरूप क्या है आदि। क्योंकि जो अपने को नहीं जानते हैं वे मरकर नरक में जैसा दुःख होता है, वैसा दुःख प्राप्त करते है। इस कारण दुःख के परित्राण प्राप्त करने के लिए गोविन्द को भज। (6)

भोग वासना आदि को त्यागकर और धनादि के लोभ का परित्याग करके मन्दिर में वृक्ष के नीचे अथवा श्मशान भूमि में अवस्थित होकर, कुछ मृगछाल के परिधान को धारण करके वित्त लोभ आदि के कष्ट सहन करने योग्य नहीं होते। जो कुछ भी स्वीकार नहीं करता, भोगादि का परित्याग करता है। उसका भोग विषयों में वैराग्य होता है वह ही वास्तविक सुखी है। उस सुख के लिए गोविन्द को भजो। (7)

शत्रु मित्र आदि मिथ्याभूत होते हैं। शत्रु के साथ युद्ध से, मित्र के साथ मित्रता से, पुत्र के साथ वात्सल्य से, तथा बन्धुओं के साथ आलाप से समय नष्ट होता है। इस कारण उसमें यत्न और समय व्यय नहीं करना चाहिए। सर्वत्र सुख और दुःख में, द्वन्द्व में, और अनुराग में जो समान रूप से रहता है। वह ही विष्णुत्व अर्थात् मोक्ष को प्राप्त करता है। इस प्रसंग में गीता

में भगवान् कृष्ण के द्वारा स्थिर धी का लक्षण कहा गया है –

**दु:खेष्वनुद्विग्नमना: सुखेषु विगतस्पृह:।**
**वीतरागभयक्रोध: स्थितधीर्मुनिरुच्यते॥**

स्थित प्रज्ञ ही मोक्ष प्राप्त करते हैं। उस प्रकार के मोक्ष के लाभ के लिए परमेश्वर की आराधना करनी चाहिए। (8)

## पाठगत प्रश्न 8.2

7. किसका गर्व कैसे नहीं करना चाहिए?
8. क्या-क्या त्यागकर अपनी चिन्ता करनी चाहिए?
9. कैसा होता है यदि जन विराग सुख प्राप्त करता है?
10. क्या सब को सुखी करता है?
11. कहाँ यत्न नहीं करना चाहिए?
12. विष्णुत्व प्राप्ति के लिए क्या करना चाहिए?

## 8.4 मूलपाठ की व्याख्या

**त्वयि मयि चान्यत्रैको विष्णुर्व्यर्थं कुप्यसि मय्यसहिष्णु:।**
**सर्वस्मिन्नपि पश्यात्मानं सर्वत्रोत्सृज भेदज्ञानतम्॥ 9 ॥**

**प्राणायामं प्रत्याहारं नित्यानित्यविवेकविचारम्।**
**जाप्यसमेतसमाधिविधनं कुर्ववधनं महदवधानम्॥ 10 ॥**

**नलिनीदलगतसलिलं तरलं तद्वज्जीवितमतिशयचपलम्।**
**विद्धिव्याधयभिमानग्रस्तं लोकं शोकहतं च समस्तम्॥ 11 ॥**

**अन्वय-** हे सखे त्वयि मयि च अन्यत्र एक:। व्यर्थम् असहिष्णु: मयि कुप्यसि। सर्वस्मिन् अपि आत्मानं पश्य। सर्वत्र भेदज्ञानम् उत्सृज ॥ 9 ॥

प्राणायामम् प्रत्याहारम् नित्यानित्यविवेकविचारं जाप्यसमेतसमाधिविधानम् अवधानं महदवधानं कुरु ॥ 10 ॥

नलिनीदलगतसलिलं तरलं तद्वत् जीवितं अतिशयचपलम्। व्याधयभिमानग्रस्तं शोकहतं समस्तम् लोक विद्धि ॥ 11 ॥

**अन्वयार्थ-** हे मित्र तुझ में और मुझ में अन्यत्र सब में एक ब्रह्म ही है। इसलिए व्यर्थ ही

असहिष्णु मत हो। सब में अपने को देख, इस संसार में भेदज्ञान से रहित हो जाओ। प्राणायाम प्रत्याहार नित्यानित्यविवेक के साथ श्रीभगवान का ध्यान कर और महदवधान का प्रयत्न कर। जैसे नीलकमल के पत्ते पर जल नहीं ठहरता अर्थात् जीवन क्षण स्थायी है। इसलिए व्याध अभिमान ग्रस्त इस संसार को जान।

**व्याख्या-** सर्वं खलु इदं ब्रह्म''। सभी शरीरों में एक ब्रह्म ही होता है। किसी के ऊपर क्रोध करने का नाम अपने ऊपर क्रोध ही है। क्रोध से आत्मज्ञान विस्मृत हो जाता है। जैसा कि भगवान् श्री कृष्ण द्वारा गीता में कहा गया है -

**काम एष क्रोध एष रजोगुण समुद्भवः।**
**महाशनो महापाप्मा विद्ध्येनमिह वैरिणम्॥**

क्रोध आदि अनर्थक होते हैं। सर्वत्र अपना अर्थात् ब्रह्मत्व दर्शन करना चाहिए। ब्रह्मज्ञान से भेदज्ञान यह मेरे लिए, यह मेरा, यह तुम्हारा इत्यादि का नाश होता है। सर्वत्र आत्मोपलब्धि के लिए गोविन्द को भजो। (9)

प्राणायाम प्रत्याहार आदि का अभ्यास करना चाहिए। अर्थात् अद्वैत वेदान्त के अष्टांगों का विधिवत् अभ्यास अपेक्षित है। किन्तु चित्त शुद्धि आदि करने के लिए जप करना चाहिए। उसके साथ श्रीभगवत का नाम स्मरण आदि भी करना चाहिए। उस भगवत के गुण कीर्तन से मन में शान्ति आती है। इससे महान् जो ब्रह्म प्राप्ति रूप निश्चय है वह सुतर हो जाता है। इस प्रकार महान अवधान को करो। इसकी उपलब्धि के लिए गोविन्द को भजो। (10)

पद्म पत्र पर जल क्षणिक भी नहीं ठहरता है। इसी प्रकार मनुष्यों का जीवन भी अत्यन्त चंचल नाम वाला है। आज है परन्तु कल स्थापित रहने के योग्य नहीं है। समस्त यह संसार रोगादि से ग्रसित है किन्तु इससे अभिमान, प्रीति, द्वेष आदि व्याप्त हैं। फिर भी यह शोक से परिपूर्ण है। यहाँ संसार में दु:ख सर्वदा प्राप्त होते हैं। जो कुछ भी सुख प्राप्त होता है। वह भी बाद में दु:ख ही देगा। इससे यह सब जानो। इससे मुक्ति और चिरसुख को प्राप्त करने के लिए गोविन्द को भजो।(11)

## पाठगत प्रश्न 8.3

13. विष्णु कहाँ-कहाँ है?
14. सर्वत्र क्या पैदा होता है?
15. क्या-क्या अवधान के कार्य है?
16. जीवन कैसा होता है?
17. समस्त लोक कैसा है?

## 8.5 मूलपाठ की व्याख्या

**का तेऽष्टादशदेशे चिन्ता वातुल तव किं नास्ति नियन्ता।**
**यस्त्वां हस्ते सुदृढनिबद्धं बोधयति प्रभवादिविरुद्धम्॥ 12 ॥**

**गुरुचनणाम्बुजनिर्भरभक्तः संसारादचिराद् भव मुक्तः।**
**सेन्द्रियमानसनियमादेवं द्रक्ष्यसि निजहृदयस्थ देवम्॥ 13 ॥**

**द्वादशपञ्जरिकामय एष शिष्याणां कथितो ह्युपदेशः।**
**येषां चित्ते नैव विवेकस्ते पच्यन्ते नरकमनेकम्॥ 14 ॥**

**अन्वय-** वातुल ते अष्टादशदेशे चिन्ता। तव नियन्ता किं नास्ति। यः हस्ते सुदृढनिबद्धं त्वां प्रभवादिविरुद्धं बोधयति ।।12।।

गुरुचरणाम्बुजनिर्भरभक्तः अचिरात् संसारात् मुक्तः भव। सेन्द्रियमानसनियमात नियमात् निजहृदयस्थं देवं द्रक्ष्यसि ।। 13 ।।

एषः द्वादशपंजरिकामय हि शिष्याणाम् कथितः उपदेशः । येषां चित्ते विवेकः नैव ते नरकम् अनेक पच्यन्ते ।।14 ।।

**अन्वयार्थ-** हे उन्मत जीव तुम्हारी विषयों में कैसी चिन्ता है तुम्हारे नियन्ता प्रभु नहीं है क्या। दोनों हाथों को जोड़कर प्रभु से आत्मज्ञान जानो। गुरु के चरणों पर आश्रित जो भक्त है वह शीघ्र ही संसार से मुक्त हो जाता है। वह इन्द्रियों के साथ मन को नियंत्रित करने से परब्रह्म को देखता है। यह स्तोत्र निश्चय ही शिष्यों के स्थानवास के लिए कहा गया उपदेश है जिन लोगो के मन में सदविचार नहीं है वे मूढ़ नरक के दुःखों में पड़ते है।

**व्याख्या-** पागल उन्मत जीव, तुम्हारी अठारह देशों में बहुत से विषयों में कैसी चिन्ता या व्याकुलता है। तुम्हारे वे नियन्ता प्रभु क्या नहीं हैं। वस्तुत बहुत से विषयों में चिन्ता व्यर्थ हैं। जो तुम्हारे दोनों हाथों को सुदृढ़ता से ग्रहण करके जन्म मरण आदि विकारों से पृथक करता है। वह ब्रह्म ज्ञान ही आत्यन्तिक दुःख नाशक है ऐसा बोध होगा। उस प्रकार के ब्रह्मज्ञान को प्राप्त करना चाहिए और गोविन्द को भजो। (12)

**गुरोरंघिपद्मे मनश्चेन्न लग्नं**
**ततः किं ततः किं ततः किं ततः किम्॥**

इस शंकराचार्य के वचन से ज्ञात होता है कि जो गुरू के चरणों का भक्तिमान है वह ही संसार सागर को पार करने में सक्षम होता है। वह ही आत्मज्ञान को प्राप्त करता है। आत्म ज्ञान के लाभ के लिए गुरु में सम्पूर्ण भक्ति, गुरु के वचनों में श्रद्धा और विश्वास अपेक्षित है। अतएव अद्वैत वेदान्त में ब्रह्मज्ञान के अधिकारी शमादिषट्क सम्पत्ति से युक्त हो। शमादि-शम, दम, उपरति, तितिक्षा, समाधान और श्रद्धा है। उनमें से गुरु के उपदिष्ट वेदान्त वाक्य में विश्वास को श्रद्धा कहते हैं। इस प्रकार गुरु में श्रद्धावान और भक्तिमान होकर मायावृत संसार से शीघ्र ही मुक्ति को प्राप्त होते हैं। इसलिए तुम उस प्रकार होकर शीघ्र ही मोक्ष को प्राप्त करो।

इन्द्रियों के साथ मन के संगमन का नाम निग्रह है वह भी अपेक्षित है, अर्थात् शमदि सम्पन्न हो। उससे तुम अपने में स्थित परमात्मा को देखने मे समर्थ होते है। तत्प्राप्त्यर्थ तुम गोविन्द को भजो–

भगवत्चरण श्री शंकराचार्य द्वारा शिष्यों के नाम उनके साक्षात् शिष्यों की परम्परा से हमारे लिए कृत्याकृत्य विवेक के विषय में उपदेश मुख से यह स्तोत्र कहा है। जो श्रद्धान्वित होकर, विश्वास करके आत्मज्ञान के प्राप्ति के लिए प्रयत्न करेंगे वे अवश्य मुक्त होंगे। परन्तु जिनके चित में ज्ञानोदय न होगा वे जनम मरण आदि चक्र से बन्धे रहकर पुनः पुनः दुःख के मूल संसार में आयेंगे। इसलिए संसार के दुःखों से मुक्ति प्राप्त करने के लिए तुम गोविन्द को भजो।

## पाठगत प्रश्न 8.4

18. कैसा नियन्ता अपेक्षित है?
19. जन कैसे संसार से मुक्त होता है?
20. अपने हृदयस्थ देव के दर्शन कैसे प्राप्त होते है?
21. यह मोहमुद्‌गर स्तोत्र कैसा है?
22. कौन नरक में पकते हैं?

### श्रीरामगुणवर्णन

## 8.6 मूलपाठ

**स च नित्यं प्रशान्तात्मा मृदुपूर्वं च भाषते।**
**उच्यमानोऽपि परुषं नोत्तरं प्रतिपद्यते।। 1।।**

**कदाचिदुपकारेण कृतेनैकेन तुष्यति।**
**न स्मरत्यपकाराणां शतमप्यात्मवत्तया।। 2।।**

**शीलवृद्धैर्ज्ञानवृद्धैर्वयोवृद्धैश्च सज्जनैः।**

**कथयन्नस्त वै नित्यमस्त्रयोग्यान्तरेष्वपि।। 3।।**

**बुद्धिमान्मधुराभाषी पूर्वभाषी प्रियंवदः।**

**वीर्यवान्न च वीर्येण महता स्वेन विस्मितः।। 4।।**

**न चानृतकथो विद्वान्वृद्धानां प्रतिपूजकः।**
**अनुरक्तः प्रजाभिश्च प्रजाश्चाप्यनुरञ्जते।। 5।।**

कुलोचितमतिः शात्रं स्वधर्मं बहु मन्यते।
मन्यते परया प्रीत्या महत्स्वर्गफलं ततः॥ 6॥

नाश्रेयसि रतो यश्च न विरुद्धकथारुचिः।
उत्तरोत्तरयुक्तीनां वक्ता वाचस्पतिर्यथा॥ 7॥

अरोगस्तरुणो वाग्मी वपुष्मान्देशकालवित्।
लोके पुरुषसारज्ञः साधुरेको विनिर्मितः॥ 8॥

धर्मकामार्थतत्त्वज्ञः स्मृतिमान्प्रतिभानवान्।
लौकिके समयाचारे कृतकल्पो विशारदः॥ 9॥

निभृतः संवृताकारो गुप्तमन्त्रः सहायवान्।
अमोघक्रोधहर्षश्च त्यागसंयमकालवित्॥ 10॥

रामः सत्पुरुषो लोके सत्यः सत्यपरायणः।
साक्षाद्रामाद्विनिर्वृत्तो धर्मश्चापि श्रिया सह॥ 11॥

## 8.7 मूलपाठ की व्याख्या

स च नित्यं प्रशान्तात्मा मृदुपूर्वं च भाषते।
उच्यमानोऽपि परुषं नोत्तरं प्रतिपद्यते॥ 1॥

कदाचिदुपकारेण कृतेनैकेन तुष्यति।
न स्मरत्यपकाराणां शतमप्यात्मवत्तया॥ 2॥

शीलवृद्धैर्ज्ञानवृद्धैर्वयोवृद्धैश्च सज्जनैः।
कथयन्नास्त वै नित्यमस्त्रयोग्यान्तरेष्वपि॥ 3॥

बुद्धिमान्मधुराभाषी पूर्वभाषी प्रियंवदः।
वीर्यवान्न च वीर्येण महता स्वेन विस्मितः॥ 4॥

**अन्वय-** सः च नित्यं प्रशान्तात्मा मृदुपूर्वं च भाषते। उच्यमानः कोऽपिन परुषमुत्तरं प्रतिपद्यते। 1

एकेनकदाचित् उपकारेण कृतेन तुष्यति आत्मवत्तया अपकाराणां आत्मावत्तया न स्मरति।2

नित्यं शीलवृद्धैः ज्ञानवृद्धैः वयोवृद्धैः सज्जनैः अस्त्रयोग्यान्तरेषु अपि वै कथयन् आस्त । 3

बुद्धिमान् मधुराभाषी पूर्वभाषी प्रियंवदः वीर्यवान् स्वेन महता वीर्येण न विस्मितः । 4

टिप्पणी

**अन्वयार्थ**– श्रीराम नित्य क्रोध रहित मृदुता पूर्वक बोलते हैं। कोई उच्चस्वर में बोलता है तो भी उसको कठोर शब्द से उत्तर नहीं देते। पुरुष के एक उपकार से ही सन्तुष्ट उसे कभी नहीं भूलते है अपकार से दुःखी करने वाले को याद नहीं रखते हैं। सदैव सदाचार सम्पन्न वृद्धजनों से, ज्येष्ठ से, सत्पुरुष से, अस्त्र योग्य जन से भी अस्त्राभ्यास काल में वार्तालाप करते हैं। श्रीरामचन्द्र बुद्धिमान्, मधुरभाषी, पूर्वभाषी, प्रिय बोलने वाले होने पर अपने पराक्रम पर विस्मित नहीं होते हैं।

**व्याख्या**– यहाँ श्रीरामचन्द्र के गुण का वर्णन किया जाता है। वे श्रीराम सदा शान्त मन होकर ही रहते हैं। कभी भी कुछ भी बोलते है तो क्रोधादि न करके कोमल कोमल स्वर से ही बोलते है। यदि कभी कोई भी उनके साथ कठोर वचन से बोलता है तब भी वे उसके साथ कोमल शब्दों और ललित वाक्यों से बात करते है। इस प्रकार श्रीराम स्वभाव से ही शान्त और मृदुभाषी है–(1)

कोई सामान्य जन भी यदि उनका कुछ उपकार कभी, कहीं पर भी करता है तो वे श्रीराम उनको कभी भी नहीं भूलते हैं। किन्तु कुछ यदि उनका अपकार करता है। उनको दुःखी करते है तब भी वे कृपा सिन्धु स्वयं के माहात्म्य से उनके प्रति कदापि क्रोध नहीं करते हैं। उनके अपकार को भी भूल जाते हैं। यहाँ भगवान श्रीरामचन्द्र की उदारता का परिचय प्राप्त होता है। – (2)

श्रीरामचन्द्र ने सर्वदा सदाचार सम्पन्न पूज्य जनों के साथ वार्तालाप से उनके सदाचार ज्ञान को प्राप्त किया। इस प्रकार जिनमें विद्या परिपक्व है उनके साथ वार्तालाप से उनसे विविध शास्त्रों का ज्ञान प्राप्त किया। जो आयु से ज्येष्ठ अर्थात् जीवन में विविध विषयों में अभिज्ञता प्राप्त किये हुए है, उससे किसी भी परिस्थिति में कैसे होना चाहिए, इत्यादि विषय में ज्ञान को प्राप्त किया। जो सत्पुरूष है, उनसे भी नीति के उपदेशों को प्राप्त किया। वे श्रीराम इनके साथ अस्त्राभ्यास के समय में भी वार्तालाप करते थे। इस प्रकार सभी के प्रति उनकी श्रद्धा परिस्फुटित होती है।

श्री रामचन्द्र का कैसे कब और क्या व्यक्तव्य होगा इस विषय में भी उनकी विशिष्ट बुद्धि थी। अत वे व्यवहार में प्रशस्त विशिष्ट बुद्धिवान थे। वे स्वभाव से मधुरभाषी थे। प्रियवाक्य के कथन में निपुण, वे जब अति नीच जन के साथ भी वार्ता करते थे, तब आदि में सम्भाष्य करके दूसरे के अभिमुख्य सम्पादित करते थे। वे अत्यन्त बलशाली होकर भी स्वकीय महान बल से आत्मबोध विहीन अन्धे नहीं थे। यहाँ श्रीराम के महत्व को प्रकट किया।

## पाठगत प्रश्न 8.5

23. श्रीरामचन्द्र कैसे बोलते थे?

24. श्रीरामचन्द्र के प्रति कठोर वचन बोलते थे तो वे क्या करते है?

25. श्रीरामचन्द्र किस को स्मरण नहीं करते है?

26. श्रीरामचन्द्र कैसे स्मरण नहीं करते है?

27. श्रीरामचन्द्र कैसे संतुष्ट होते है?

28. श्रीराम किन के साथ अस्त्र अभ्यास काल में भी वार्तालाप करते थे?

## 8.8 मूलपाठ की व्याख्या

**न चानतकथो विद्वान्वृद्धानां प्रतिपूजकः।**
**अनुरक्तः प्रजाभिश्च प्रजाश्चाप्यनुरञ्जते॥ 5॥**

**कुलोचितमतिः क्षात्रं स्वधर्मं बहु मन्यते।**
**मन्यते परया प्रीत्या महत्स्वर्गफलं ततः॥ 6॥**

**नाश्रेयसि रतो यश्च न विरुद्धकथारुचिः।**
**उत्तरोत्तरयुक्तीनां वक्ता वाचस्पतिर्यथा॥ 7॥**

**अरोगस्तरुणो वाग्मी वपुष्मान्देशकालवित्।**
**लोके पुरुषसारज्ञः साधुरेको विनिर्मितः॥ 8॥**

**अन्वय**- न च अनृतकथः मिथ्याभाषणं। विद्धान् वृद्धानां प्रतिपूजकः। प्रजाभिः अनुरक्तः प्रजाः च अपि अनुंरजते। 5

**कुलोचितमतिः** क्षात्रं स्वधर्मं बहु मन्यते । ततः परया प्रीत्या महद् स्वर्गफलं मन्यते । 6 ॥

**अश्रेयसि न रतः** च विरुद्धकथारुचिः उत्तरोत्तरयुक्तीनां वादादिषु स्वपक्षनिर्वाहकोत्तरोत्तरयत्ने वाचस्पतिर्यथा वक्ता । 7 ॥

**अरोगः** तरुणः वाग्मी वपुष्मान् देशकालवित् लोके पुरुषसारज्ञः एक साधुः विनिर्मितः विशेषेण विलक्षणत्वेन निर्मितः। 8।

**अन्वयार्थ**- वे मिथ्या कथन नहीं करते हैं, सभी विद्याओं में सम्पन्न राम आयु, ज्ञान, और आचार से ज्येष्ठ की सेवा करते हैं। प्रजा में अनुराग करते हैं। उससे प्रजा भी उनमें अनुराग करती है। इक्ष्वाकु कुल योग्य बुद्धि वाले, अपने क्षात्र धर्म को मानते हैं। प्रजापालन रूप क्षात्र धर्म से महान स्वर्ग के फल का प्राप्त करते हैं। निष्फल द्यूतक्रीडा आदि में समय व्यतीत नहीं करते, धर्म प्रसंग को छोड़कर व्यर्थ आलस्य नहीं करते है। वे वादों में वाचस्पति के समान सुशोभित हैं। उनका शरीर रोग रहित है सदैव तारूण्य अंगों से शोभित हैं वाग्मी, देश काल के अनुसार आचरण करते है, दूसरों के अन्तःकरण को एक बार में ही जान लेते हैं।

**व्याख्या**- यहाँ भगवान श्रीरामचन्द्र की महिमा का कथन करते हैं। वे कभी भी मिथ्या कथन नहीं करते थे। सर्वविधान सम्पन्न श्रीराम जो आयु से ज्येष्ठ, ज्ञान से ज्येष्ठ, तथा आचार से ज्येष्ठ उनका सम्मान व सेवा आदि करते हैं। वे सभी प्रजा के अनुराग विषयीभूत हैं। कुछ भी कहा जाये वे प्रजाजनों का अनुरंजन करते हैं। इससे अनुरंज्जित प्रजा भी उनमें अनुरक्त थी। (5)

टिप्पणी

श्रीराम स्वयं के इक्ष्वाकु कुल के विषय में ज्ञानसम्पन्न थे। उनकी मति सूक्ष्म विचार संहिता इक्ष्वाकु कुल योग्य थी। वे अपनी प्रजापालन आदि रूप क्षत्रिय धर्म का अत्यन्त श्रद्धा से पालन करते हैं। क्योंकि क्षत्रिय धर्म का श्रद्धा से पालन करने से महान स्वर्ग फल प्राप्त होता है ऐसा वे चिन्तन करते हैं । (6)

द्यूतक्रीडा आदि जिस कर्म का कोई भी फल नहीं है उस प्रकार के कर्म श्रीराम कभी भी नहीं करते हैं। धर्म प्रसंग को छोड़कर व्यर्थ आलाप आदि वे कभी भी नहीं करते हैं। जब विविध शास्त्रों को आधार करके वाद चलता है तब वहाँ वे वाचस्पति के समान सुशोभित होते हैं। अर्थात् वाद-विवाद में उनको कोई भी पराजित करने में समर्थ है। (7)

उन श्रीरामचन्द्र का शरीर सदा ज्वरादि रोग रहित है सर्वदा तारुण्य उनके अंगों में सुशोभित होती है। उनका शरीर दृढ़ है, और भी लौकिक वैदिक कर्म किस काल में, कैसे करने चाहिए इस विषय में वे समीचीन रूप से जानते थे। कोई पुरुष क्या सोचता है ऐसा वे एक बार में उसको देखकर जान लेते है। इस प्रकार वे साधु के समान अन्तर्यामी थे। ऐसा ज्ञात होता है।

## पाठगत प्रश्न 8.6

29. श्रीराम किन के प्रतिपूजक हैं-

    (1) प्रजा में, (2) अमात्यों के, (3) वृद्धों के, (4) योगियो के

30. रामचन्द्र कैसे प्रजा से अनुरक्त हैं?

31. रामचन्द्र किन को अनुरंजन करते है?

32. रामचन्द्र क्या बहुत मानते हैं?

33. रामचन्द्र किन में रत नहीं हैं?

34. रामचन्द्र कैसे वक्ता थे?

35. रामचन्द्र लोक में कैसे है?

36. 'पुरुषसारज्ञः' का क्या तात्पर्य है?

## 8.9 मूलपाठ की व्याख्या

**धर्मकामार्थतत्त्वज्ञः स्मृतिमान्प्रतिभानवान्।**
**लौकिके समयाचारे कृतकल्पो विशारदः॥ 9॥**

**निभृतः संवृताकारो गुप्तमन्त्रः सहायवान्।**
**अमोघक्रोधहर्षश्च त्यागसंयमकालवित्॥ 10॥**

**राम: सत्पुरुषो लोके सत्य: सत्यपरायण:।**
**साक्षाद्रामाद्विनिर्वृत्तो धर्मश्चापि श्रिया सह॥ 11॥**

**अन्वय**- धर्मकामार्थतत्त्वज्ञ: स्मृतिमान् प्रतिभावान् लौकिके समयाचारे कृतकल्प: विशारद: । 9

निभृत: संवृताकार: गुप्तमन्त्र: सहायवान् अमोघक्रोधहर्ष: त्यागसंयमकालवित् । 10

राम: लोके सत्पुरुष: सत्य: सत्यपरायण: धर्म: श्रिया सह रामात् साक्षात् विनिर्वृत्त: । 11

**अन्वयार्थ**- वे धर्मकामार्थ के तत्वों को जानते है, स्मृतिवान्, प्रतिभावान् लोक में संकेत मात्र से कृतसंकल्प होते हैं। विनीत, संकेत आदि से कार्य सिद्धि की अपेक्षा करते है। अर्थात् गुप्तमन्त्रणा को छिपाने में दक्ष है। उनका क्रोध निष्फल नहीं है। वे दाशरथि सत्यपुरुष सत्यपरायण क्षात्रधर्म श्रिया के साथ श्रीराम अव्यवधन से विनिवृत्त है।

**व्याख्या**- धर्म अर्थ काम और मोक्ष ये चार पुरुषार्थ है। उनके विषय में श्रीराम को अतीव गम्भीर ज्ञान है। वे एक बार में समझ लेते है। उसको कभी नहीं भूलते हैं। किसी भी वस्तु के प्रकाशन में उनका अभिनव सामर्थ्य है। यथासमय पर वैदिक और लौकिक कर्म आदि के आचरण में उनका सामर्थ्य अनुपम है। अर्थात वे वैदिक और लौकिक कर्मों के आचरण में उनकी अतीव निपुणता है। इस प्रकार श्रीराम का सभी कार्यो में सामर्थ्य है ऐसा स्फुटित होता है। (9)

श्रीराम विनय सम्पन्न है। किसी भी कार्य सिद्धि के लिए संकेत आदि की अपेक्षा करते हैं। अन्यथा उस कार्य के विघ्न की संभावना हो जाती है। वे उस प्रकार के संकेत को छिपाने में दक्ष थे। किसी भी कर्म के लिए जब तक फल नहीं होता तब तक उसकी मन्त्रणां आदि उनको छोड़कर अन्य किसी से भी जानने में समर्थ नहीं है। उनकी मन्त्रणा अतीव युक्ति संभव होती है। वे क्रोध अथवा हर्ष करते है तो वह कदापि निष्फल नहीं होता और भी वे कब किसका त्याग अथवा कब किसको ग्रहण करना चाहिए इस विषय में विलक्षण बुद्धि सम्पन्न हैं। (10)

वे श्रीराम लोक में अत्यन्त सत्पुरुष सज्जन हैं। अर्थात् उनका अपने शत्रुओं में भी स्नेह है। वे सत्यस्वरुप और सत्यपरायण हैं। सत्यधर्म का परिपालन सदा करते है। वे राजश्री के साथ अपने धर्म का निर्वहन सम्यक रूप से करते है।

## पाठगत प्रश्न 8.7

37. 'धर्मकामोक्षतत्त्वज्ञ:' का क्या तात्पर्य है?

38. श्रीरामचन्द्र कहाँ कृतकल्प है?

39. श्रीरामचन्द्र लोक में कैसे हैं?

40. श्रीराम किसके पारायण हैं?

(1) धर्मपरायण (2) ध्यानपरायण, (3) सत्यपरायण, (4) प्रजाकल्याण परायण,

41. श्री राम का धर्म किसके साथ विनिवृत है –

(1) पत्नी के साथ, (2) मन्त्रियों के साथ, (3) श्रिया के साथ, (4) भुव के साथ

## पाठसार

परम कारूणिक भवगत श्री शंकराचार्य ने सभी के लिए ज्ञानोदयार्थ यह द्वादशपञ्जरिका स्तोत्र की रचना की। इस स्तोत्र के प्रत्येक पद में वे संसार की अनित्यता, वहाँ दुःख ही मूल है, इस कारण से मुक्ति के लिए गोविन्द का अर्थात् परब्रह्म के भजन कार्य का उपदेश दिया है। स्तोत्र से सार रूप में ज्ञात होता है कि धनजन स्त्री पुत्र आदि में आत्मबुद्धि नहीं करनी चाहिए। क्योंकि किसी के साथ भी संबंध क्षणिक आभास ही है। इस कारण संसार के विषयों में अहं भाव न हो। जब तक सत्कर्मों से उपार्जन किया जाता है। उससे अपना जीवन यापन करना चाहिए। जो कामक्रोधादि से मत्त है वे सोचते हैं कि जगत उनके अधीन है। इस प्रकार अज्ञानी प्रतिदिन दुःखों से बहुत अधिक दुःखी होते हुए नरक के कष्टों का अनुभव करते हैं। सदैव समचित होना चाहिए। अर्थात् सुख में, और दुख में कभी भी लिप्त नहीं होना चाहिए। यह जीवन कमल के पत्र में स्थित जल के समान है। कब क्या जायेगा अथवा क्या होगा ऐसा कोई भी कहने में समर्थ नहीं है। इसलिए शीघ्र ही आत्मचिन्तन से ब्रह्मस्वरूपावाप्तिरूप मोक्ष को साधना चाहिए। इस स्तोत्र को पढ़कर जो गुरु में श्रद्धावान् होकर ब्रह्मज्ञान लाभ के लिए प्रयत्न करे उसी को अनन्त सुख प्राप्ति और मोक्ष हो यह भगवान शकराचार्य का आशय है।

इस पाठ के द्वितीय भाग श्रीरामगुणवर्णन महामुनि वाल्मीकि विरचित रामायणाख्य महाकाव्य में है। वहाँ दशरथपुत्र श्रीराम के गुणों का वर्णन किया गया है। वहाँ चितांश का सार है उससे श्रीराम सर्वदा प्रसन्तचित्त होते हैं। वे कभी भी किसी के साथ कठोर भाषण नहीं करते हैं। वे सर्वदा मधुर और प्रिय वाक्य का व्यवहार करते हैं। नीच जन में भी उनकी समान प्रीति होती है। कभी भी कोई उनका कोई भी उपकार करता है तो वे सर्वदा उसको याद रखते है। कोई उनका अपकार करता है तो भी वे उसे याद नहीं करते हैं। सभी के प्रति उनकी श्रद्धा है। वे वृद्धों के वाक्यों को सुनकर जीवन में पालन करते हैं। उनका महान पराक्रम है परन्तु निष्प्रयोजन उस पराक्रम का प्रदर्शन नहीं करते हैं। अपने धर्म का भी परिपालन सम्यक्ता से करते हैं। द्यूतक्रीडा से वे समय व्यतीत नहीं करते हैं। यदि वे वाद में प्रवृत होते हैं। तब उनकी पराजय असंभव है।

वे शुद्धाचित हैं क्योंकि जो कोई पुरुष मन में जो कुछ भी सोचते हैं वे उसको जानने में समर्थ हैं। राज्य परिपालन के कौशल को भी वे सम्यकता से समझते हैं। उनकी मंत्रणा का जब तक कर्म का फल नहीं आता जब तक उसको जानने में समर्थ नहीं है। सर्वदा सत्य का पालन करते हैं। शत्रु के प्रति भी उनका द्वैष नहीं है, अपितु स्नेह ही है। वे सम्पदा के साथ धर्म का निर्वहन करते हैं। इस प्रकार भगवान श्रीराम के माहात्म्य का प्रतिपादन किया है।

टिप्पणी

## आपने क्या सीखा

- स्रोत साहित्य का संक्षिप्त परिचय।
- मोहमुद्गर स्रोत के माध्यम से अद्वैत वेदान्त के सिद्धांत को जाना।
- श्री रामगुणर्कीतन के माध्यम से रामचरित्र को जाना।

## पाठांत प्रश्न

1. 'मूढ जहीहि धनागमतृष्णाम्' -श्लोक को पूरा करके व्याख्या कीजिए।
2. 'कामं क्रोधं लोभं मोहम्' -श्लोक की पूर्ति करके व्याख्या कीजिए।
3. 'मा कुरु धनजय यौवनगर्वम्'-श्लोक की पूर्ति करके व्याख्या कीजिए।
4. 'सुरमन्दिरतरुमूलनिवास'-श्लोक की पूर्ति करके व्याख्या कीजिए।
5. 'गुरुचरणाम्बुजनिर्भर भक्ता:'-श्लोक की पूर्ति करके व्याख्या कीजिए।
6. 'मोहमुद्गर स्तोत्र का सार लिखिए।
7. 'शील वृद्धैज्ञ नवृद्धै:'-श्लोक की पूर्ति करके व्याख्या कीजिए।
8. 'बुद्धिमान मधुराभाषी'-श्लोक की पूर्ति करके व्याख्या कीजिए।
9. 'कुलोचितमति:'-श्लोक की पूर्ति करके व्याख्या कीजिए।
10. 'अरोगस्तरुणो'-श्लोक की पूर्ति करके व्याख्या कीजिए।
11. 'धर्मकामार्थतत्त्वज्ञ:'- श्लोक की पूर्ति करके व्याख्या कीजिए।
12. 'श्रीरामगुणवर्णना' पाठ के सार का प्रतिपादन कीजिए।

## पाठगत प्रश्नों के उत्तर

**8.1**

1. मरण समीप हो तो डुकृञ् करणे इत्यादि व्याकरणशास्त्रादि भी रक्षा नहीं कर सकता।
2. मूढ द्वारा धनागमतृष्णा का त्याग करना चाहिए।
3. अर्थ (धन) जब स्वपुत्र आदि के अपहरण से डर पैदा होता है। तब अर्थ (धन) अनर्थ होता है।
4. अपने कर्म से उपार्जित धन से चित्त का विनोद करना चाहिए।

टिप्पणी

5. सर्वत्र यह नीति विहित है कि जब धनिकों में पुत्रादि यह मेरा सर्वस्व हारेगा इत्यादि डर होता है।

6. पत्नी पुत्र आदि सम्बन्ध अनित्य है। परन्तु संसार में उस प्रकार का संबंध नित्य प्रतीत होता है अत: मायावृत्त संसार विचित्र है।

**8.2**

7. धनजन यौवन का गर्व नहीं करना चाहिए क्योंकि काल क्षण मात्र से धनजन यौवन को हरने में समर्थ है।

8. काम, क्रोध, मोह और लोभ त्याग कर अपनी चिन्ता करनी चाहिए।

9. देव मन्दिर में वृक्ष के नीचे निवास, भूतल पर सोना, मृगचर्म धारण करना, विषय भोग में वितृष्णा जब होती है तब ही जन विराग सुख को प्राप्त होता है।

10. विराग सब को सुखी करता है।

11. शत्रु, पुत्र, बन्धु और मित्र में सन्धिविग्रह का प्रयत्न नहीं करना चाहिए।

12. सर्वत्र समान चित होकर विष्णु प्राप्ति के लिए स्थिर धी रहना चाहिए।

**8.3**

13. तुम में, मुझ में और अन्य सभी में विष्णु है।

14. सर्वत्र यह मेरा, यह तेरा इत्यादि भेद बुद्धि को पैदा करता है।

15. प्राणायाम, प्रत्याहार, ब्रह्म ही नित्य वस्तु, उससे अन्य अखिल अनित्य है, नित्यानित्यविवेकविचार, जाप्यसमवेतसमाधिविधान ये सभी महान् अवधान के कार्य है।

16. जैसे पद्मपत्र में स्थित जल क्षण स्थायी होता है उसी प्रकार जीवन अत्यन्त चञ्चल है।

17. व्याध्याभिमान ग्रस्त दु:खभरित संसार है।

**8.4**

18. जो दोनों हाथों को ग्रहण करके जन्म मरणादि विकार से विरूद्ध आत्म तत्व का बोध करता है।

19. गुरू चरणों पर निर्भर भक्त जन को संसार से मुक्ति होती है।

20. इन्द्रियों के साथ मन के संयम से निजहृदयस्थ देव का दर्शन होगा।

21. शिष्यों के उपदेश के लिए।

22. जिनका चित्त में विवेक नहीं है वे नरक में पकते हैं।

टिप्पणी

**8.5**

23. रामचन्द्र मधुर भाषा बोलते हैं।

24. वे कठोर वचन से उत्तर नहीं देते थे।

25. अपकारों का स्मरण नहीं है।

26. श्रीरामचन्द्र अपनी कृति से अपकार को स्मरण नहीं करते है।

27. श्रीराम एक ही उपकार से संतुष्ट होते हैं।

28. श्री राम शीलवृद्ध, ज्ञानवृद्ध वयोवृद्ध एवं सज्जनों के साथ अस्त्राभ्यास काल में वार्तालाप करते हैं।

**8.6**

29. (3) वृद्धों की

30. श्रीराम प्रजा का अनुरुञ्जन करते हैं। अत: वे प्रजा से अनुरक्त होते है।

31. श्रीराम प्रजा जन का अनुरञ्जन करते है।

32. श्रीराम अपने क्षात्र धर्म को बहुत मानते है।

33. श्री रामचन्द निष्फल कर्म में रत नहीं है।

34. रामचन्द्र वाचस्पति के समान वक्ता थे।

35. रामचन्द्र लोक में पुरूष सार को जानने वाले है।

36. पुरुष सारज्ञपुरुषस्य सारं जानाति य: स पुरुषसारज्ञ:। अर्थात् पुरुष के हृदस्थ भाव को जानते हैं।

**8.7**

37. जो धर्म अर्थ काम के तत्वों को जानता है वे पुरुषार्थविद् होते हैं।

38. रामचन्द्र लौकिक आचार में कृतकल्प है।

39. रामचन्द्र लोक में सत्पुरूष है।

40. (3) सत्यपरायण

41. (3) श्रिया के साथ